पिछड़ी जातियों की उत्तर-मण्डल राजनीति

ज्योति मिश्रा और आशीष रंजन

अनुवाद : नरेश गोस्वामी

भारतीय राजनीतिक प्रणाली पर बहुत लम्बे समय तक ऊँची जातियों की चौधराहट क़ायम रही। इस दौरान कांग्रेस ख़ुद को विभिन्न विचारधाराओं के एक व्यापक गठबंधन के मुखिया की तरह पेश करते हुए विभिन्न सामाजिक-आर्थिक समूहों का प्रतिनिधित्व करने का दावा करती रही। लेकिन, असलियत यह थी कि वह ख़ुद भी उच्च वर्ग के दबदबे के तहत काम करती थी। कांग्रेस की सांगठनिक संरचना ही स्पष्ट कर देती है कि उसका नेतृत्व मुख्यतः उच्च वर्गों तथा ऊँची जातियों के हाथों में था। यह वर्ग न केवल राष्ट्रीय राजनीति पर, बल्कि स्थानीय स्तर पर काम करने वाली राजनीतिक प्रणाली पर भी हावी था। मायरन वीनर के अनुसार स्थानीय स्तर पर और राज्यों की राजनीति पर खेतिहर तथा देशी अभिजन समूह क़ाबिज़ थे और राष्ट्रीय राजनीति पर शहरी, अंग्रेज़ी भाषी और विदेशों से पढ़ाई-लिखाई कर के लौटे लोगों का दबदबा था। इसलिए जैसे ही कांग्रेस पार्टी का वर्चस्व टूटा, राजनीति में ख़ाली हुई जगह में अन्य पार्टियों (मुख्यतः वंचित जातियों के नेताओं की क्षेत्रीय पार्टियाँ) को अहम भूमिका निभाने का मौक़ा मिल गया। आशुतोष वार्ष्णेय के मुताबिक़ कांग्रेस के क्षय से पैदा हुए राजनीतिक शून्य को हिंदू राष्ट्रवादी, क्षेत्रवादी तथा निम्न जातियों की राजनीति ने भरा। निचली जातियों की इस राजनीति का नेतृत्व मुख्यतः दलितों (अनुसूचित जातियों) तथा अन्य पिछड़े वर्गों की सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ी हुई जातियों से निकला था। दूसरी लोकतांत्रिक लहर की थीसिस का सूत्रीकरण करने वाले योगेंद्र यादव का ख़याल है कि नब्बे के दशक में ऐसे सामाजिक वर्गों की बढ़ती भागीदारी से मतदाताओं की संख्या

में वृद्धि तो हुई है और यह भी दिखा कि इन वर्गों के लोग चुनावी गतिविधियों में भी बढ़ चढ़कर शिरकत करने लगे। चुनावी तंत्र में जाति आधारित राजनीति के इस आग़ाज़ ने राजनीतिक सत्ता को ऊँचे आसन से नीचे उतरने के लिए मजबूर कर दिया।

देश में पहली ग़ैर-कांग्रेसी सरकार 1957 में केरल में बनी। यह मुख्यत: एजवा समुदाय (निम्न जाति) की सरकार थी जो कम्युनिस्ट पार्टी के झण्डे तले गोलबंद हुई थी। छठे दशक में कुछ ऐसा ही राजनीतिक बदलाव दक्षिण भारतीय के राज्य तमिलनाडु में हुआ जहाँ द्रविड़ मुनेत्र कषगम (द्रमुक) जैसी ग़ैर-ब्राह्मण पार्टी एक दमदार ताक़त के रूप में उभरी। राजनीति में निम्न जातियों का दख़ल ज़्यादा ठोस रूप में 1977 के राष्ट्रीय चुनावों में सामने आया जब जयप्रकाश नारायण की सम्पूर्ण क्रांति ने वंचित जातियों के अनेकानेक नेताओं को राज्यों की राजनीति में प्रतिष्ठित कर दिया। जिन दलों को जनता दल के नाम से जाना जाता रहा है उनमें लगभग सारे दल किसी न किसी रूप में इसी आंदोलन की देन हैं। वार्ष्णेय के विश्लेषण के आधार पर यह बात ज़ोरदारी से कही जा सकती है कि निम्न जातियों पर आधारित ऐसे दल भले ही अपने दम पर सत्ता तक न पहुँच पाएँ पर केंद्र में कोई भी सरकार उनके समर्थन के बिना बनाना मुश्किल है।

इस लेख के माध्यम से वंचित जातियों, ख़ास तौर पर अन्य पिछड़े वर्गों की राजनीति से जुड़ी परिघटना की पड़ताल करते हुए अन्य पिछड़े वर्ग के प्रतिनिधित्व, मतदान के पैटर्न और उनके चुनावी व्यवहार की पड़ताल करने का प्रयास किया गया है।

राजनीतिक इकाई के तौर पर अन्य पिछड़े वर्गों का उदय

उपलब्ध आँकड़ों के मुताबिक़ भारत की कुल जनसंख्या में हिंदू पिछड़े वर्गों का प्रतिशत 43.7 फ़ीसद है।[1] आबादी में यह हिस्सेदारी इतनी बड़ी है कि इसे देखते हुए चुनावी राजनीति में इस तबक़े की भूमिका अनदेखी नहीं की जा सकती। मूल रूप से अन्य पिछड़े वर्गों में ऐसी जातियाँ शामिल हैं जिनकी हैसियत सामाजिक पदानुक्रम के लिहाज़ से अस्पृश्य जातियों से ऊपर किंतु ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य जैसी द्विज जातियों से कमतर मानी जाती है। दूसरे शब्दों में इन पिछड़े वर्गों को सामाजिक और शैक्षिक रूप से भी पिछड़ा कहा जा सकता है। अन्य पिछड़े वर्ग में तरह तरह की जातियाँ और उप-जातियाँ शामिल हैं। इस लिहाज़ से उसे एक बहुरंगी समूह माना जा सकता है। मण्डल आयोग ने अन्य पिछड़े वर्ग के अंतर्गत जातियों का निर्धारण अलग-अलग आधार पर किया था परंतु उसका बुनियादी पैमाना जातियों के सामाजिक, शैक्षिक तथा आर्थिक पिछड़ेपन व वंचित स्थितियों पर आधारित था। सरकार ने आठवें दशक से नवें दशक के बीच इन सामाजिक समूहों की स्थिति में सुधार करने के लिए कुछ कानूनी प्रावधानों के साथ कई क़दम उठाए। हालाँकि कई राज्यों में कुछ तथा-कथित पिछड़ी जातियाँ सम्पन्न किसानों में शुमार की जाती हैं। इन जातियों को आज़ादी के बाद किये गये ज़मींदारी उन्मूलन का भी लाभ मिला था जिसके चलते इनमें कई की हैसियत भू-स्वामियों की हो गयी थी, परंतु इसके बावजूद अन्य पिछड़े वर्गों का एक बड़ा भाग सामाजिक-आर्थिक सुधारों के लाभ से अधिकांशत: वंचित ही रहा है।

जनता पार्टी ने 1979 में इन जातियों के पिछड़ेपन का जायज़ा लेने और उनके लिए आरक्षण की व्यवस्था करने के लिए एक आयोग का गठन किया जिसका अध्यक्ष बिंदेश्वरी प्रसाद मण्डल को बनाया गया। आयोग ने सरकार को अपनी रपट और अनुशंसाएँ दिसम्बर, 1980 में सौंप दी। दूसरे आयोगों की रपटों की तरह मण्डल आयोग ने भी जाति को ही अन्य पिछड़े वर्ग में शामिल करने का

---

[1] भारत में 1931 के बाद जनसंख्या गणना में जातियों की गणना नहीं की गयी है. ये आँकड़े मण्डल आयोग की रपट पर आधारित हैं.

11_jyoti_ashish_Layout 1 5/1/2014 4:02 PM Page 135

मुख्य आधार स्वीकार किया। इस संबंध में विभिन्न आयोगों की राय यह रही है कि जाति को नागरिकों का एक वर्ग माना जाए और अगर पूरी की पूरी जाति ही सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ी है तो उसे आरक्षण का लाभ दिया जा सकता है। मण्डल आयोग की रपट लागू करने का श्रेय विश्वनाथ प्रताप सिंह की सरकार को जाता है। इसके क्रियान्वयन के लिये यह दलील पेश की गयी थी कि किसी भी वर्ग का उत्थान केवल धन के सहारे नहीं किया जा सकता। उसका विकास केवल सत्ता में हिस्सेदारी के ज़रिये ही सुनिश्चित किया जा सकता है और यह चीज़ इस बात से तय होती है कि समाज में उनकी हैसियत क्या है। सरकारी नौकरियों में आरक्षण प्रदान करने से संबंधित आयोग की कुछ अनुशंसाओं को 1993 में लागू कर दिया गया। सरकार के इस क़दम को इन वर्गों के सामाजिक और शैक्षिक सशक्तीकरण की दृष्टि से जायज़ ज़रूर क़रार दिया गया, लेकिन दूसरी तरफ़ ऊँची जातियों की तरफ़ से इसका कड़ा विरोध किया गया। भारतीय राजनीति के इस चरण को मण्डल युग का नाम दिया जाता है। भारत के चुनावी तंत्र में अन्य पिछड़े वर्गों की राजनीति का प्रस्थान-बिंदु इसी काल को माना जाता है।

ग्राफ़-1 : भारत में सांसदों की जाति (1952-2004)

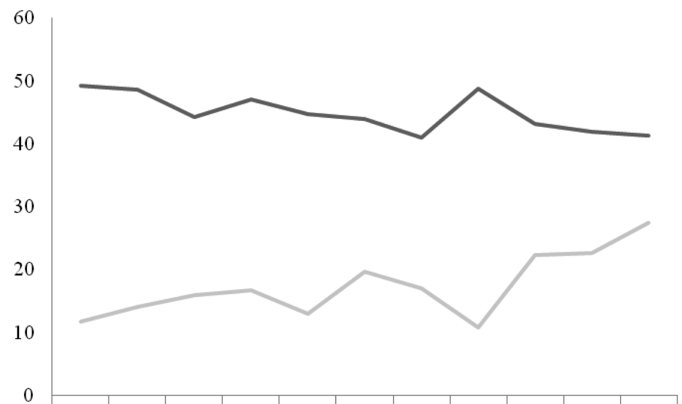

	1952	1957	1962	1967	1971	1977	1980	1984	1989	1996	2004
अन्य पिछड़े वर्ग के सांसद	11.8	14	15.9	16.7	13	19.7	17.1	10.8	22.4	22.7	27.5
ऊँची जातियों के सांसद	49.2	48.6	44.2	47.1	44.7	43.9	41	48.7	43.1	42	41.3

नोट : सभी आँकड़े प्रतिशत में. **स्रोत :** सी.एस.डी.एस. आँकड़ा एकांश. 1991, 1998, 1999 और 2009 के आंकड़े उपलब्ध नहीं.

अन्य पिछड़े वर्गों का संसद में प्रतिनिधित्व

भारतीय समाज के किसी भी हिस्से का राजनीतिक सशक्तीकरण इस बात से आँका जाता है कि संसद या विधानसभाओं में उसका प्रतिनिधित्व कैसा है। एक समय भारत की राजनीतिक व्यवस्था ऊँची जातियों के पक्ष में झुकी हुई थी, परंतु निम्न जातियों की लामबंदी और उनके राजनीतिक उभार के बाद लोकसभा और विधानसभाओं में इन वर्गों का प्रतिनिधित्व बढ़ता गया है। सांसदों और विधायकों की जातिगत तथा सामुदायिक पृष्ठभूमि से संबंधित आँकड़ों के आधार पर यह बख़ूबी देखा जा सकता है कि 1989 के चुनावों के बाद अन्य पिछड़े वर्ग के सांसदों और विधायकों की संख्या में निरंतर इज़ाफ़ा हुआ है (तालिका-1)। इस काल में पिछड़ों की राजनीति अपनी मुक़म्म्ल शक्ल अख़्तियार

11_jyoti_ashish_Layout 1 5/1/2014 4:02 PM Page 136

कर चुकी थी और पिछड़ी जातियाँ स्वतंत्र रूप से वोट देने लगी थीं। जैफ्रलो और संजय कुमार द्वारा उपलब्ध कराये गये साक्ष्यों से पता चलता है कि संसद में ऊँची जातियों के सांसदों का अनुपात कम हुआ है। यह बात केवल संसद पर ही नहीं बल्कि राज्य विधानसभाओं पर भी इसी तरह लागू होती है जहाँ पिछड़ी जातियों के विधायकों का अनुपात लगातार बढ़ता जा रहा है। पिछड़ी जातियों की इस लामबंदी और उनके प्रतिनिधित्व में आये उछाल को उत्तर भारत में बिहार, उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश व दक्षिण भारत के आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु तथा कर्नाटक जैसे राज्यों में ख़ास तौर पर देखा जा सकता है।

मतदान की दृष्टि से अन्य पिछड़ी जातियों का व्यवहार ख़ासा अस्थिर रहा है। उन्हें एक ऐसा वर्ग माना जाता है जो परिणामों में भारी उलट-फेर कर सकता है। इसी कारण राज्यों और केंद्र में अक्सर होने वाले सत्ता-परिवर्तन के पीछे इस वर्ग की बड़ी भूमिका रहती है। पिछले पच्चीस वर्षों के दौरान प्रकट होने वाले सबसे फ़ैसलाकुन बदलावों को अन्य पिछड़ी जातियों की सत्ता पर मुखर दावेदारी का परिणाम कहा जा सकता है। राष्ट्रीय राजनीति तथा ख़ास तौर पर हिंदी पट्टी के राज्यों यथा उत्तर प्रदेश तथा बिहार में आठवें दशक के आख़िरी वर्षों में जब कांग्रेस का पराभव होना शुरू हुआ तो उसकी एक बड़ी वजह यह थी कि अन्य पिछड़ी जातियाँ कांग्रेस के बजाय उसके राजनीतिक विकल्पों को मजबूत करने लगी थीं। 1989 में विश्वनाथ प्रताप सिंह के नेतृत्व में जनता दल, उत्तर

ग्राफ़-2 : अन्य पिछड़े वर्गों का मतदान (1971-2009)

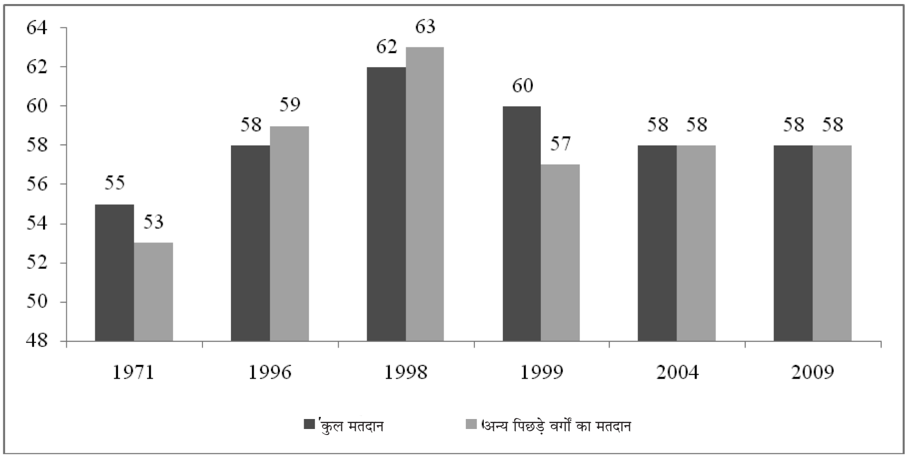

नोट : इन चुनावों में आँकड़ों को वास्तविक मतदान के आधार पर दिखाया गया है.
स्रोत : राष्ट्रीय चुनाव अध्ययन के आँकड़े

प्रदेश में कल्याण सिंह के नेतृत्व में भाजपा के अलावा मुलायम सिंह, बिहार में लालू प्रसाद यादव और नीतीश कुमार, आंध्र प्रदेश में तेलुगु देशम, तमिलनाडु में एम. करुणानिधि आदि का उदय अन्य पिछड़ी जातियों के इस जबर्दस्त उभार का ही नतीजा था।

पिछड़े वर्ग के मतदाताओं की चुनावी भागीदारी

कई विद्वानों की मान्यता है कि कि चुनावों में अब पहले से ज़्यादा लोग अपने मताधिकार का इस्तेमाल करने लगे हैं। समाज के वंचित वर्ग यानी दलित, अन्य पिछड़े वर्ग, ग्रामीण तथा स्त्रियों की इस

11_jyoti_ashish_Layout 1 5/1/2014 4:02 PM Page 137

राजनीतिक भागीदारी को लोगों ने अलग-अलग ढंग से समझने का प्रयास किया है। 1989 के चुनावों के बाद इन वर्गों के मतदान-प्रतिशत में लगातार वृद्धि हुई है। इस परिघटना को ही योगेंद्र यादव लोकतंत्र की दूसरी लहर के रूप में पेश करते हैं। हालाँकि प्रमुख राज्यों के विधानसभा चुनावों में लोगों की भागीदारी 1952 से ही बढ़ने लगी थी लेकिन 1988-89 के बाद इस प्रक्रिया में अभूतपूर्व उछाल आया जो 1993-95 तक एक ऐसे मुक़ाम पर पहुँच गया जिसकी अनदेखी नहीं की जा सकती थी। इसी दौर में जय प्रकाश आंदोलन से जुड़े कई नेता राजनीति में नयी ताक़त बनकर उभरे। इस तरह उत्तर भारत में समाज के नये मतदाता-समूह अर्थात् पिछड़ी जातियों पर आधारित इस नयी राजनीतिक शक्ति ने सत्ता में पहुँचकर चुनावों के रंग-ढंग को पूरी तरह से बदल दिया।

1971 के चुनावों से लेकर 2009 के लोकसभा चुनावों[2] के दरमियान अन्य पिछड़ी जातियों के मतदाताओं की संख्या में भारी इज़ाफ़ा हुआ है। किंतु इन मतदाताओं के मतदान-व्यवहार को किसी निश्चित साँचे में नहीं रखा जा सकता। 1971 के चुनावों में पिछड़ी जातियों का औसत मतदान राष्ट्रीय मतदान से कम था। परंतु 1996 के लोकसभा चुनाव आते-आते उनका मतदान छह प्रतिशत बढ़ चुका था। इस बारे में दिलचस्प यह है कि अब उनका औसत मतदान राष्ट्रीय मतदान से ज़्यादा हो चुका था। यह रुझान 1998 के चुनावों में भी क़ायम रहा। 1999 के लोकसभा चुनावों में पिछड़े मतदाताओं की संख्या राष्ट्रीय औसत से कम रही, पर हाल के दो चुनावों में पिछड़े मतदाता और मतदान के राष्ट्रीय आँकड़ों के बीच लगभग एक बार फिर बराबरी हो गयी है।

2009 के लोकसभा चुनावों में पिछड़ी जातियों के मतदाताओं के इस प्रदर्शन का राज्यों के आधार पर अलग-अलग ढंग से विश्लेषण किया जा सकता है। इस प्रयोजन के लिए हम राज्यों को तीन कोटियों में बाँट कर देख सकते हैं। पहले समूह में उन राज्यों को रखा गया है जहाँ पिछड़ी जातियों के मत 2009 के दौरान राज्यों में हुए कुल मतदान से ज़्यादा रहे हैं। इस समूह में उत्तर प्रदेश, त्रिपुरा, ओडीशा, केरल तथा कर्नाटक को शामिल किया जा सकता है। राज्यों की इस दूसरी कोटि में गुजरात, झारखण्ड, महाराष्ट्र तथा तमिलनाडु जैसे राज्यों को शामिल किया जा सकता है जहाँ 2009 के लोकसभा चुनावों के दौरान पिछड़े मतदाताओं के मत राज्यों में होने वाले कुल मतदान के बराबर

ग्राफ़-3 : 2009 में विभिन्न राज्यों में अन्य पिछड़े वर्गों का मतदान

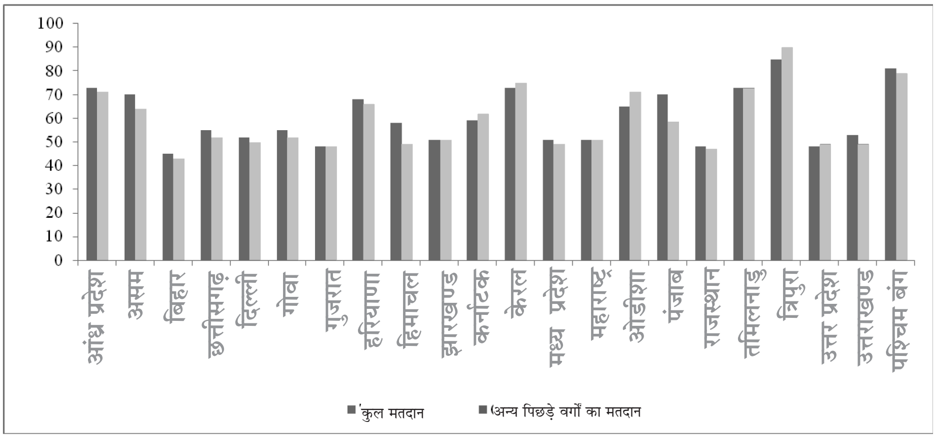

नोट : सौ से कम सेंपल वाले राज्यों के आँकड़े यहाँ शामिल नहीं किये गये हैं. इन चुनावों में आँकड़ों को वास्तविक मतदान के आधार पर दिखाया गया है. **स्रोत :** राष्ट्रीय चुनाव अध्ययन के आँकड़े

11_jyoti_ashish_Layout 1 5/1/2014 4:02 PM Page 138

रहे। तीसरे समूह में आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, छत्तीसगढ़, दिल्ली, गोवा, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तराखण्ड तथा पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों (चार्ट-3) को शामिल किया गया है जहाँ पिछड़ी जातियों के मत 2009 के लोकसभा चुनाव के दौरान इन राज्यों में हुए कुल मतदान से कम थे।

पिछड़ी जातियों में मतदान का रुझान

कांग्रेस-प्रणाली के दौर में समाज के अन्य मतदाता-समूहों की भाँति पिछड़ी जातियाँ भी कांग्रेस का समर्थन करती थीं। पिछड़े वर्गों की जातिगत लामबंदी और अपनी जाति और समुदाय के हितों की बात करने वाली पार्टियों को वोट देने का चलन उत्तर-मण्डल परिघटना है। हालाँकि 1971 से पहले के चुनावों के संबंध में पर्याप्त आँकड़े मौजूद नहीं है परंतु राज्यों और चुनावी राजनीति के अध्येताओं का मानना है कि इससे पहले कांग्रेस भारतीय समाज के इन वर्गों में काफ़ी लोकप्रिय थी और उनका समर्थन हासिल करने में सफल रहती थी। लेकिन सी.एस.डी.एस. के आँकड़ों के आधार पर यह बात पक्के तौर पर कही जा सकती है कि अब पिछड़ी जातियाँ कांग्रेस से हट कर क्षेत्रीय दलों के पाले में चली गयी हैं। 1971 के लोकसभा चुनावों में कांग्रेस को पिछड़ी जातियों के 37 प्रतिशत वोट मिले थे लेकिन 1996 के लोकसभा चुनावों में उसके इस आँकड़े में 12 प्रतिशत की गिरावट आ चुकी थी। ग़ौरतलब है कि पिछड़ी जातियों के मत हासिल करने के मामले में कांग्रेस भाजपा से आगे रहती आयी थी। लेकिन 1998 के चुनावों में भाजपा ने पासा पलट दिया था। आँकड़े बताते हैं कि भाजपा को 1996 के चुनावों में पिछड़ी जातियों के 19 प्रतिशत वोट मिले थे जबकि 1998 में उसका वोट प्रतिशत बढ़कर 27 प्रतिशत हो गया था। इस तरह पिछले चुनावों के मुक़ाबले भाजपा न केवल अपने मतों की संख्या सुधारने में सफल रही थी बल्कि उसने कांग्रेस के पिछड़े वोटों में भी सेंधमारी कर दिखायी। उल्लेखनीय है कि 1998 के बाद होने वाले चुनावों में भाजपा के वोटों की संख्या लगभग इसी स्तर (केवल एक प्रतिशत का अंतर) पर बनी रही है (तालिका-1)।

राष्ट्रीय स्तर पर पिछड़ी जातियों के बीच कांग्रेस के घटते समर्थन की दो तरीक़ों से व्याख्या की जा सकती है। इस बदलाव का पहला कारण तो यह हो सकता है कि इस बीच भाजपा हिंदू राष्ट्रवाद की विचारधारा साध कर एक मजबूत राजनीतिक दल के रूप में उभरी है। उल्लेखनीय है कि भाजपा मंदिर मुहिम और बाबरी मसजिद के ध्वंस के बाद हिंदू मतदाताओं को हिंदू राष्ट्रवाद की नयी राजनीतिक ताक़त की ओर खींचने में कामयाब रही थी। चूँकि पिछड़ी जातियाँ मूलत: हिंदू जातियाँ

तालिका-1

अन्य पिछड़े समुदायों के मतों का दलगत वितरण : राष्ट्रीय परिदृश्य

वर्ष	कांग्रेस	भाजपा
1971	37	7
1996	25	19
1998	23	27
1999	24	23
2004	24	23
2009	22	21

नोट : सभी आँकड़े प्रतिशत में. शेष मतदाताओं ने अन्य पार्टियों के पक्ष में मतदान किया. इन चुनावों में आँकड़ों को वास्तविक मतदान के आधार पर दिखाया गया है.

ही हैं लिहाज़ा मंदिर आंदोलन के दौरान वे भाजपा की तरफ़ चली गयी थीं और उन्होंने भाजपा के पक्ष में वोट दिया था। इसका एक कहीं ज़्यादा महत्त्वपूर्ण कारण यह था कि मण्डल के बाद उभरी राजनीति के चलते निम्न जातियाँ कांग्रेस को छोड़ कर उन राज्य स्तरीय दलों के पीछे चली गयी थीं जिनका नेतृत्व उनकी जाति के नेता कर रहे थे। संक्षेप में कहा जाए तो इस बदलाव के पीछे मंदिर-मण्डल की राजनीति काम कर रही थी।

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, भारतीय राजनीति के क्षेत्रीयकरण ने राज्यों की चुनावी राजनीति परिवर्तित करने के साथ राष्ट्रीय राजनीति का मिज़ाज भी रूपांतरित कर दिया है। क्षेत्रीय दलों के उभार के कारण भारत में गठजोड़ की एक ऐसी राजनीति का विकास हुआ है जिसमें कोई भी राष्ट्रीय कही जाने वाली पार्टी पिछड़ी जातियों की क्षेत्रीय पार्टियों का सहयोग लिए बिना केंद्र में सरकार नहीं बना सकती। ज़ाहिर है कि पिछड़ी राजनीति का यह अभूतपूर्व उभार हमें इस सवाल की ओर ले जाता है कि आख़िर क्षेत्रीय या राज्य स्तर पर ऐसा क्या घटा था जिसके कारण चुनावी राजनीति का पूरा चरित्र ही बदल गया । इस संबंध में तालिका-2 पिछड़े समूहों के मतदान-व्यवहार और मतदान-रुझान की राज्य स्तरीय तस्वीर पेश करती है। आर्थिक और सामाजिक रूप से पिछड़े वर्ग की सम्पन्न जातियाँ अपने क्षेत्र की प्रमुख पार्टियों को एकमुश्त वोट देती हैं। ऐसी पार्टियों के बढ़ते वर्चस्व का मुख्य कारण यही है। लेकिन याद रहे कि अन्य पिछड़ी जातियों को समरूप समूह नहीं माना जा सकता। इन जातियों के भीतर आपसी तनाव भी सक्रिय रहते हैं जिनका किसी ख़ास राज्य में पार्टी की चुनावी प्रतिस्पर्धा पर उल्लेखनीय असर पड़ता है। मसलन, बिहार में पिछड़ी जातियों के दो समूह सक्रिय हैं : कुर्मी-कोयरी और यादव। इन समूहों की राजनीतिक पसंद एक दूसरे से काफ़ी अलग रही हैं। दोनों जाति-समूह अपने-अपने समुदाय के दल को ही वोट देते हैं। यादव समुदाय स्पष्ट रूप से लालू प्रसाद यादव की पार्टी राष्ट्रीय जनता दल (राजद) को वोट देता है। तालिका से पता चलता है कि यादव समुदाय ने राजद को 54 प्रतिशत वोट दिये जबकि कुर्मी-कोयरी जैसे मजबूत पिछड़े जाति समूह से कुर्मी नेता नीतीश कुमार की पार्टी जनता दल (एकीकृत) को 45 प्रतिशत वोट प्राप्त हुए। कुछ इसी तरह का रुझान कर्नाटक में भी देखा जा सकता है जहाँ पिछड़ी जातियों में वोक्कालिगा तथा लिंगायत ख़ास अहमियत रखते हैं। इन दोनों का मतदान-व्यवहार एक दूसरे से ख़ासा अलग रहता है। 2009 के लोकसभा चुनावों में वोक्कालिगा समुदाय के 30 प्रतिशत लोगों ने जनता दल (सेकुलर) को वोट दिया था। ग़ौरतलब है कि पार्टी के तत्कालीन प्रमुख नेता वोक्कालिगा समुदाय से ही संबंधित थे। इसी तरह पिछड़ी जातियों के एक अन्य प्रमुख समूह लिंगायतों ने भाजपा को मत दिया था क्योंकि उसके नेता बीएस येदियुरप्पा लिंगायत समुदाय से ही संबंध रखते हैं। बाद में 2013 में जब कर्नाटक में भाजपा में विभाजन हो गया और येदियुरप्पा ने एक अलग पार्टी कर्नाटक गणतांत्रिक पार्टी (कगपा) का गठन कर लिया तो विधानसभा चुनाव में लिंगायत मतदाताओं का रुझान येदियुरप्पा की पार्टी की ओर ही देखा गया। इससे ज़ाहिर हो जाता है कि नेता की जाति या पार्टी का चेहरा उसके मतदाताओं को लामबंद करने में ख़ास अहमियत रखता है।

तालिका-2 को ध्यान से देखने पर चार बड़ी तस्वीरें उभरती हैं। प्रथम, सामान्य रुझान यह दिखायी देता है कि पिछड़ी जातियों के ज़्यादा वोट हासिल करने वाली पार्टी ही अपने क्षेत्र में राजनीतिक रूप से ज़्यादा मजबूत है। दूसरे, बिहार, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक तथा ओडीशा जैसे राज्यों में अन्य पिछड़ी जातियों का अनुपात ज़्यादा होने के कारण वहाँ क्षेत्रीय दल ज़्यादा प्रभावशाली और मज़बूत हो गये हैं। इस दूसरी तस्वीर से एक तीसरी बड़ी तस्वीर यह बनती है कि जिन राज्यों में क्षेत्रीय दल मज़बूत होकर उभरे हैं वहाँ राष्ट्रीय दलों का प्रभाव क्षेत्र सिकुड़ गया है तथा चुनावी प्रतिस्पर्धा दो-ध्रुवीय होने के बजाय बहुकोणीय हो गयी है। इस संदर्भ में उत्तर प्रदेश, बिहार, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, असम तथा कर्नाटक आदि का उल्लेख किया जा सकता है। इन राज्यों में कांग्रेस या

तालिका-2

अन्य पिछड़े समुदायों के मतों का दलगत वितरण : राज्यवार परिदृश्य

राज्य	वर्चस्वशाली जातियाँ	कांग्रेस	भाजपा	क्षेत्रीय दल	सैंपल-आकार
आंध्र प्रदेश	यादव, गोल्ला, कुरूमा	31	1	तेदेपा-44, पीआरपी-14, अन्य दल-10	154
	गौड़ा, गावल, सेट्टी बलिजा, इडिगा, कृष्ण बलिजा	35	1	तेदेपा-14, पीआरपी-20, अन्य दल-5	147
	अन्य पिछड़े वर्ग	40	5	तेदेपा-34, पीआरपी-17, अन्य दल-5	701
असम	अहोम	37	6	अगप-51, अन्य दल-6	35
	कोछ	44	26	अगप-18, अन्य दल-13	39
	अन्य पिछड़े वर्ग	37	17	अगप-16, अन्य दल-30	309
बिहार	यादव	5	4	जद (एकी)-10, राजद-54, अन्य दल-27	243
	कुर्मी-कोयरी	4	19	जद (एकी)-45, राजद-5, अन्य दल-27	136
	अन्य पिछड़े वर्ग	13	15	जद (एकी)-31, राजद-36, अन्य दल-5	474
छत्तीसगढ़	यादव	25	75	अन्य दल-0	28
	तेली	25	48	अन्य दल-27	44
	अन्य पिछड़े वर्ग	33	56	अन्य दल-11	90
गुजरात	कोली	42	46	अन्य दल-12	102
	क्षत्रिय	49	44	अन्य दल-7	144
	अन्य पिछड़े वर्ग	51	46	अन्य दल-3	166
हरियाणा	अन्य पिछड़े वर्ग	49	8	भारालोद-10, एचजेसी 18, अन्य दल-15	158
झारखण्ड	यादव	15	40	झामुमो-10, राजद-17, अन्य दल-18	48
	अन्य पिछड़े वर्ग	14	40	झामुमो-12, राजद-3, अन्य दल-31	104
कर्नाटक	वोक्कालिगा	28	38	जद (सेकु)-30, अन्य दल-5	324
	लिंगायत	18	72	जद (सेकु)-6, अन्य दल-6	312
	अन्य पिछड़े वर्ग	44	34	जद (सेकु)-13, अन्य दल-9	457

11_jyoti_ashish_Layout 1 5/1/2014 4:02 PM Page 141

तालिका-2 जारी

केरल	ऐझवा	30	7	एलडीएफ़-58, अन्य दल-58	148
	अन्य पिछड़ी जातियाँ	62	3	एलडीएफ़-31, अन्य दल-4	222
मध्य प्रदेश	यादव	47	33	अन्य दल-20	73
	अन्य पिछड़ी जातियाँ	31	48	अन्य दल-21	288
महाराष्ट्र	मराठा-कुनबी	21	38	एसएचएस-25, एनसीपी-8, अन्य दल-8	141
	अन्य पिछड़ी जातियाँ	19	27	एसएचएस-19, राकांपा-17, अन्य दल-18	491
ओडीशा	यादव	34	20	बीजद-46, अन्य दल-0	77
	कुर्मी	26	20	बीजद-45, अन्य दल-9	118
	अन्य पिछड़ी जातियाँ	28	16	बीजद-47, अन्य दल-9	215
राजस्थान	गुज्जर	22	26	अन्य दल-52	50
	माली	27	25	अन्य दल-48	49
	अन्य पिछड़ी जातियाँ	39	52	अन्य दल-9	244
तमिलनाडु	वन्नियार	12	2	अन्ना द्रमुक-25, डीएमके-28,	486
	थेवर	15	2	अन्ना द्रमुक-29, डीएमके-23	208
	नाडार	8	8	अन्ना द्रमुक-31, डीएमके-24	87
	अन्य पिछड़ी जातियाँ	18	3	अन्ना द्रमुक-24, डीएमके-29	872
त्रिपुरा	जोगी	20	17	वाम दल-60, अन्य दल-3	35
	अन्य पिछड़ी जातियाँ	24	3	वाम दल-65, अन्य दल-8	81
उत्तर प्रदेश	यादव	12	6	सपा-75, बसपा-4, अन्य दल-3	236
	कोरी-कुर्मी	19	16	सपा-15, बसपा-15, अन्य दल-35	167
	अन्य पिछड़ी जातियाँ	14	27	सपा-30, बसपा-18, अन्य दल-11	272
प. बंगाल	अन्य पिछड़ी जातियाँ	11	8	तृण मूल-35, वाम दल-42, अन्य दल-4	219

नोट : सभी आँकड़े प्रतिशत में. इस विश्लेषण के लिए राष्ट्रीय चुनाव अध्ययन (एनएसई)-2009 का इस्तेमाल किया गया है. सौ से कम सैम्पल वाले राज्य इसमें शामिल नहीं हैं. इन चुनावों में आँकड़ों को 2009 के वास्तविक मतदान के आधार पर दिखाया गया है.

11_jyoti_ashish_Layout 1 5/1/2014 4:02 PM Page 142

तालिका- 3 वोटर की शैक्षिक पृष्ठभूमि और मतों का दलगत वितरण

तालिका-3 : शिक्षा के आधार पर विभिन्न दलों के लिए मतदान

शैक्षिक स्तर	कांग्रेस							भाजपा/जनसंघ						
वर्ष	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971
निरक्षर	20	25	25	29	23	26	39	40	19	22	22	27	18	8
प्राइमरी तक	25	24	23	23	25	27	32	39	22	21	21	27	18	7
दसवीं तक	24	21	22	21	23	23	39	43	20	22	22	27	18	10
कॉलेज या उससे ऊपर	18	20	23	14	20	18	20	46	26	28	32	34	30	–

शैक्षिक स्तर	वाम दल							बसपा							अन्य दल						
वर्ष	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971
निरक्षर	2	3	4	3	3	10	9	2	4	4	3	4	4	–	36	50	45	43	49	43	45
प्राइमरी तक	3	6	7	9	7	9	3	2	3	2	1	3	2	–	31	46	46	45	38	45	58
दसवीं तक	3	7	8	6	9	8	12	2	4	3	2	3	2	–	28	47	46	50	40	49	40
कॉलेज या उससे ऊपर	2	5	5	5	7	8	–	2	3	3	3	1	1	–	32	47	41	47	38	44	80

नोट : सभी आँकड़े प्रतिशत में. 2014* का अर्थ है आने वाले चुनाव जिनके लिए ट्रैकर पोल-2014 के आँकड़ों का इस्तेमाल किया गया हैस जो वास्तविक मतदान के मुताबिक़ नहीं हैं. बाक़ी चुनावों के लिये आँकड़ों को 2009 के वास्तविक मतदान के आधार पर दिखाया गया है.

तालिका-4 : आयु के अनुसार विभिन्न दलों के लिए मतदान

आयु वर्ग	कांग्रेस							भाजपा/जनसंघ						
वर्ष	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971
25 वर्ष तक	17	21	24	22	23	21	38	49	24	27	27	25	24	8
26-35 वर्ष	22	21	24	23	24	24	40	42	21	23	25	28	19	9
36-45 वर्ष	21	22	21	24	21	25	35	44	22	24	20	28	19	6
46-55 वर्ष	21	25	22	27	24	27	33	38	20	19	22	30	15	5
56 और उससे अधिक	27	24	28	26	25	29	41	35	19	20	19	27	14	8

आयु वर्ग	वाम दल							बसपा							अन्य दल						
वर्ष	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971
25 वर्ष तक	2	7	5	4	5	9	5	2	3	3	2	2	2	–	30	45	42	45	46	45	51
26-35 वर्ष	2	5	6	6	7	9	9	2	3	3	3	3	3	–	32	49	45	42	39	46	43
36-45 वर्ष	2	5	5	6	6	9	8	2	4	3	2	4	3	–	31	48	46	49	40	45	42
46-55 वर्ष	2	6	7	5	7	10	14	2	4	3	1	6	4	–	37	47	48	45	34	45	48
56 और उससे अधिक	3	6	6	6	6	9	1	1	3	4	2	2	2	–	34	48	43	48	41	45	50

नोट : सभी आँकड़े प्रतिशत में. 2014* का अर्थ है आने वाले चुनाव जिनके लिए ट्रैकर पोल-2014 के आँकड़ों का इस्तेमाल किया गया हैस जो वास्तविक मतदान के मुताबिक़ नहीं हैं. बाक़ी चुनावों के लिये आँकड़ों को 2009 के वास्तविक मतदान के आधार पर दिखाया गया है.

11_jyoti_ashish_Layout 1 5/1/2014 4:02 PM Page 143

भाजपा की ज़मीन बेहद सिकुड़ गयी है। इससे चौथी तस्वीर यह साफ़ होती है कि राजनीति में राज्य का नेतृत्व भी महत्त्वपूर्ण हो गया है। मतदाता अपने वोट के मामले में उस पार्टी को तरजीह देते हैं जिसका नेतृत्व या तो उनकी जाति के नेता के हाथ में हो या फिर ऐसे किसी नेता को पार्टी के नेता के रूप में प्रचारित किया जाए।

आम तौर पर किसी भी वर्ग या जाति के मतदाताओं की राजनीतिक समझ और उनका मतदान-व्यवहार उनकी सामाजिक पृष्ठभूमि— जैसे निवास के क्षेत्र, जेण्डर, शिक्षा के स्तर तथा आयु आदि से निर्धारित होता है। लेख के इस हिस्से में हम इस बात पर ध्यान देंगे कि एक समूह के तौर पर पिछड़ी जातियों का मतदान-व्यवहार उनकी सामाजिक पृष्ठभूमि से कैसे तय होता है। तालिका-3 से हम यह अंदाज़ा लगा सकते हैं कि पिछड़ी जातियों के अल्पशिक्षित मतदाता कांग्रेस की तरफ़ ज़्यादा झुके हुए हैं। पिछड़ी जातियों में जैसे जैसे शिक्षा का स्तर बढ़ता जाता है वैसे वैसे इन जातियों में कांग्रेस के वोट घटने लगते हैं। यहाँ यह भी देखा जा सकता है कि तमाम चुनावों में ग़ैर-शिक्षित लोगों ने आम तौर पर कांग्रेस को वोट दिया था। कांग्रेस को पिछड़ी जातियों की ओर से जितने मत मिलते हैं उनमें लगभग आधे मत ऐसे मतदाताओं के हैं जो या तो अल्पशिक्षित (प्राथमिक स्तर तक) हैं या फिर शिक्षित नहीं हैं। इसके दूसरी तरफ़, ज़्यादा शिक्षित लोगों का रुझान भाजपा की तरफ़ दिखायी देता है। तालिका-4 से यह भी पता चलता है कि मतदान के मामले में आयु भी एक स्वतंत्र घटक है। मसलन, पिछड़ी जातियों के युवा मतदाता भाजपा की ओर ज़्यादा झुके हुए हैं और अपना मत उसी को देते हैं। आगामी लोकसभा चुनावों (2014) में इन युवा मतदाताओं की वोट अन्य पार्टियों के बजाय भाजपा की झोली में ज़्यादा गिरती दिख रही हैं।

पिछड़ी जातियों के मतदान-पैटर्न को देखने से पता चलता है कि कांग्रेस को पिछड़ी जातियों के पुरुषों की तुलना में स्त्रियों के मत ज़्यादा मिलते रहे हैं। दिलचस्प है कि भाजपा के मामले में यह रुझान इसके ठीक उलटा है। भाजपा को स्त्रियों के बजाय पुरुष ज़्यादा वोट देते हैं (तालिका-5)। मतदाता का निवास स्थान भी उसके मतदान-निर्णय को प्रभावित करता है। इस प्रकार, ग्रामीण मतदाता कांग्रेस को ज़्यादा वोट देते हैं। यह रुझान 1971 के चुनावों से 2009 के चुनावों तक साफ़-साफ़ देखा जा सकता है। लेकिन इस बार सम्भावना है कि यह रुझान बदल जाए। ऐतिहासिक रूप से भाजपा को मुख्यत: शहरी और कांग्रेस को ग्रामीण मतदाताओं के वोट मिलते रहे हैं परंतु जनवरी 2014 के ट्रैकर सर्वेक्षण से साफ़ संकेत मिल रहे हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले अधिकतर पिछड़े समूह इस दफ़ा अपना वोट भाजपा को थमा सकते हैं। (तालिका-6)

आगे की सम्भावनाएँ

इस चर्चा से साफ़ ज़ाहिर है कि भारत की चुनावी राजनीति में पिछड़े समूह एक ताक़त बन चुके हैं इसलिए आगामी चुनावों में भी उनकी भूमिका महत्त्वपूर्ण रहेगी। इन चुनावों में जीत हासिल करने के लिए विभिन्न पार्टियों ने अपने अपने जाति-कार्ड खेलने शुरू कर दिये हैं। बीते समय में राष्ट्रीय दलों को यह बख़ूबी एहसास हो चुका है कि पिछले कई चुनावों से राज्यों की राजनीति उनके हाथों में नहीं रह गयी हैं लिहाज़ा उन्हें यह अच्छी तरह पता है कि पिछड़े समूहों को लामबंद किये बिना वे चुनाव नहीं जीत सकते। तालिका-7 देखने से एक दिलचस्प बात का पता चलता है कि पिछड़े वर्ग में भाजपा पहली पसंद बनती जा रही है। जिन राज्यों में दो दलों के बीच सीधा मुक़ाबला होना है वहाँ इस बात की सम्भावना प्रबल नज़र आती है कि पिछड़ी जातियों की वोटों का बड़ा हिस्सा भाजपा के ख़ाते में चला जाए। हिंदी पट्टी के उन राज्यों में भी, जहाँ अब तक पिछड़ी जातियों के क्षेत्रीय दलों का दबदबा रहा है, भाजपा पिछड़े वर्ग के मतदाताओं के बीच अच्छा प्रदर्शन करती लग रही है। मसलन, बिहार और उत्तर प्रदेश में भाजपा को पिछड़ी जातियों के वोटों में क्रमश: 43 और 50 प्रतिशत वोट मिलने

11_jyoti_ashish_Layout 1 5/1/2014 4:02 PM Page 144

तालिका–5 : जेण्डर के अनुसार वोटों में विभिन्न दलों की हिस्सेदारी

जेण्डर	कांग्रेस							भाजपा/जनसंघ						
वर्ष	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971
पुरुष	21	23	23	23	21	24	35	44	23	24	24	29	20	8
स्त्रियाँ	23	22	24	26	25	26	41	38	20	22	22	26	17	6

वाम दल							बसपा							अन्य दल						
2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971
2	5	6	4	5	9	9	2	4	4	2	3	3	–	31	46	44	48	41	45	48
3	6	6	7	7	9	5	2	3	2	2	3	2	–	34	49	46	43	39	46	48

नोट : सभी आँकड़े प्रतिशत में. 2014* का अर्थ है आने वाले चुनाव जिनके लिए ट्रैकर पोल–2014 के आँकड़ों का इस्तेमाल किया गया हैस जो वास्तविक मतदान के मुताबिक़ नहीं हैं. बाक़ी चुनावों के लिये आँकड़ों को 2009 के वास्तविक मतदान के आधार पर दिखाया गया है.

तालिका–6 : इलाक़ावार वोटों में विभिन्न दलों की हिस्सेदारी

इलाक़ा	कांग्रेस							भाजपा/जनसंघ						
वर्ष	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971
ग्रामीण	21	22	23	25	23	24	37	42	21	22	23	27	19	7
शहरी	25	23	24	19	24	27	37	39	21	27	21	30	18	10

वाम दल							बसपा							अन्य दल						
2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971	2014*	2009	2004	1999	1998	1996	1971
3	6	6	6	6	10	9	2	3	3	2	4	3	–	32	48	46	43	41	44	47
1	5	5	2	7	6	4	2	4	4	2	2	1	–	33	48	40	57	37	49	50

नोट : सभी आँकड़े प्रतिशत में. 2014* का अर्थ है आने वाले चुनाव जिनके लिए ट्रैकर पोल–2014 के आँकड़ों का इस्तेमाल किया गया हैस जो वास्तविक मतदान के मुताबिक़ नहीं हैं. बाक़ी चुनावों के लिये आँकड़ों को 2009 के वास्तविक मतदान के आधार पर दिखाया गया है.

की सम्भावना व्यक्त की जा रही है। इस संबंध में केवल असम और कर्नाटक ही दो ऐसे राज्य हैं जहाँ पिछड़ी जातियों की वोट के लिहाज़ से कांग्रेस भाजपा और अन्य क्षेत्रीय दलों पर भारी पड़ती दिख रही है। इस बदलाव के कारण जानने के लिए हमें थोड़ा और इंतज़ार करना होगा।

संदर्भ

आयशा जलाल (1995), *डेमॉक्रैसी ऐंड एथॉरिटेरियनिज़्म इन साउथ एशिया,* कैम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज.

आशुतोष वार्ष्णेय (2000), 'इज़ इण्डिया बिकमिंग मोर डेमॉक्रैटिक?', *द जर्नल ऑफ़ एशियन स्टडीज़,* खण्ड 59, अंक 1.

क्रिस्टॉफ़ जैफ्रेलो (2000), 'द राइज़ ऑफ़ द अदर बैकवर्ड क्लासेज़ इन द हिंदी बेल्ट', द *जर्नल ऑफ़ एशियन स्टडीज़,* खण्ड 59, अंक 1.

तालिका -7

लोकसभा चुनाव, 2014 में पिछड़ी जातियों के मतों का रुख क्या होगा : एक अनुमान

	कांग्रेस	भाजपा	क्षेत्रीय दल	सैंपल
आंध्र प्रदेश	21	11	तेरास-15, तेदेपा-28, वाईएसआर कांग्रेस-23, अन्य दल-2	645
असम	66	19	अगप-6, अन्य दल-9	120
बिहार	7	43	जद (एकी)-22, राजद-22, अन्य दल-6	730
छत्तीसगढ़	28	68	अन्य दल-4	189
गुजरात	21	73	अन्य दल-6	376
झारखण्ड	18	61	अन्य दल-21	151
केरल	32	7	वाम दल-51, अन्य दल-10	146
कर्नाटक	38	28	जद (सेकु)-31, अन्य दल-3	502
मध्य प्रदेश	26	71	अन्य दल-3	365
महाराष्ट्र	26	52	एसएचएस-8, अन्य दल-14	657
ओडीशा	24	26	बीजद-50	330
राजस्थान	26	74	-	276
तमिलनाडु	21	21	अन्ना द्रमुक-37, द्रमुक-12, अन्य दल-9	607
उत्तर प्रदेश	13	50	सपा 21, बसपा 9, अन्य दल-7	1028
पश्चिम बंगाल	19	24	वाम दल-19, तृण मूल-38	192

नोट : सभी आँकड़े प्रतिशत में. जिन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया और कहा कि वे कुछ नहीं कह सकते, उन्हें इस विश्लेषण में शामिल नहीं किया गया है. विश्लेषण के लिए इस्तेमाल किये गये आँकड़े कच्चे हैं. उन्हें किसी भी वास्तविक मतदान के अनुसार भारांकित नहीं किया गया है. इसमें जनवरी, 2014 में सी.एस.डी.एस. द्वारा किये गये ट्रैकर पोल सर्वेक्षण के आँकड़ों का उपयोग किया गया है. जिन राज्यों में पिछड़े समुदायों का सैम्पल सौ से कम था, उन्हें विश्लेषण में शामिल नहीं किया गया है.

क्रिस्टॉफ़ जैफ्रेलो (2005), 'द पॉलिटिक्स ऑफ़ ओबीसी', *सेमिनार (549),* एचटीटीपी://डब्ल्यूडब्ल्यूडब्ल्यू. इण्डिया-सेमिनार.कॉम/2005/549/549%क्रिस्टॉफ़%जैफ्रेलो.एचाटीएम (29 फ़रवरी, 2014 को देखा गया).

क्रिस्टॉफ़ जेफ्रेलो और संजय कुमार (2009), *राइज़ ऑफ़ प्लेबियंस? द चेंजिंग फ़ेस ऑफ़ इण्डियन लेजिस्लेटिव एसेम्बलीज़,* रॉटलेज पब्लिकेशंस, न्यूयार्क और लंदन.

मायरन वीनर (1962), *द पॉलिटिक्स ऑफ़ स्केयरसिटी,* युनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रेस, शिकागो.

योगेंद्र यादव (1999), 'अंडरस्टेंडिंग द सेकंड डेमॉक्रैटिक अपसर्ज', फ्रेंसाइन आर. फ्रेंकेल वगैरह, *ट्रांसफ़ार्मिंग इण्डिया : सोशल ऐंड पॉलिटिकल डायनामिक्स ऑफ़ डेमॉक्रैसी,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क और नयी दिल्ली.
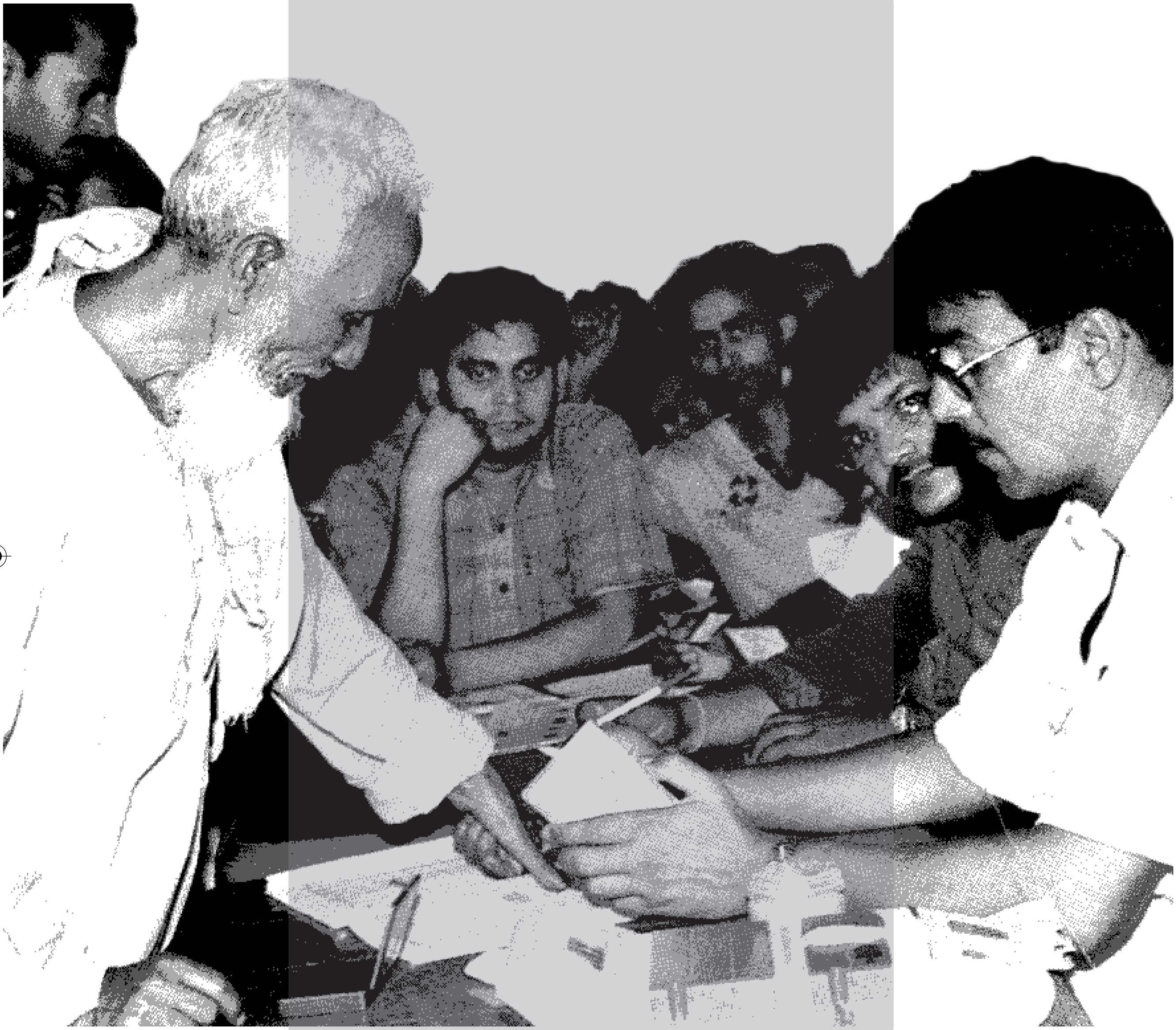
योगेंद्र यादव (1996), 'रिकॅनफ़िगरेशन इन इण्डियन पॉलिटिक्स : स्टेट एसेम्बली इलेक्शंस, 1993-94', *इकोनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खण्ड 31, अंक 2/3 .